Chaturmas-Vrat-Katha
(Hindi)

विषय सूची

।। ओ३म नमः शिवाय ।।

श्री हलषष्ठी व्रत कथा

(यह व्रत भाद्रपद मास की कृष्ण पक्ष की षष्ठी को किया जाता है।)

दोहा— सुमिर भवानी शङ्करहि, गणपति को शिर नाय।
हलषष्ठी व्रत की कथा, कहों पुराण विधि गाय॥

एक समय राजा युधिष्ठिर ने भगवान् श्रीकृष्ण से कहा कि आपने संसार की भलाई के लिए ही अवतार धारण किया है। इस समय सुभद्रा और द्रोपदी अपने पुत्रों के मरने से शोकाग्रस्त हैं तथा अभिमन्यु की स्त्री उत्तरा का गर्भ भी अश्वत्थामा के ब्रह्मास्त्र से खण्डित हो गया है। माता-पिता को सन्तान के बिना अत्यन्त दु:ख है। अत: हे प्रभो! आप कोई ऐसा व्रत, दान अथवा उपाय बतायें

जिससे कि माता-पिता संतान-शोक से दुःखी न हों और उत्तम, दीर्घायु तथा स्वस्थ सन्तान उत्पन्न हों। ये सुनकर भगवान् कहने लगे, कि हे राजन! मैं तुमको एक व्रत बतलाता हूँ, जिसको नियमपूर्वक करने से खण्डित गर्भ भी जीवन पा जाता है तथा सन्तान दुःखी नहीं होती।

कथा प्रारम्भ—राजा युधिष्ठिर के पूछने पर भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा कि प्राचीन काल में सुभद्र नाम का एक प्रसिद्ध राजा था। उसकी रानी का नाम सुवर्णा था और उनके एक हस्ती नाम का प्रतापी पुत्र था, जिसने अपने नाम से हस्तिनापुरी बसाई। राजपुत्र एक दिन धात्री के साथ गंगाजी में स्नान करने गया और गंगाजी में जल-क्रीड़ा करने लगा। इतने ही में एक ग्राह उसे जल में खींच ले गया। यह सुनकर रानी सुवर्णा बहुत दुःखी हुई और क्रोध में उसने धात्री के पुत्र को धधकती हुई अग्नि में डाल दिया। तदनन्तर राजा और रानी

अपने-अपने प्राण त्यागने को तैयार हो गये। वह धात्री भी अपने पुत्र शोक में किसी निर्जन वन में चली गई। वह धात्री वहाँ एक सुनसान मंदिर में शिवजी, पार्वती तथा गणेशजी की पूजा करने लगी। प्रतिदिन पूजन व ध्यान करके वह तृण,धान्य तथा महुआ, खाया करती थी। भगवान् बोले—कि हे राजा युधिष्ठिर! इस प्रकार व्रत करते हुए उसके प्रताप से भाद्रपद मास की कृष्ण पक्ष की षष्ठी के दिन नगर में एक अद्भुत दर्शन हुआ कि एकाएक धात्री का पुत्र अग्नि में से जीवित निकल आया। राजा रानी ने भी उस धात्री के पुत्र को अग्नि में से निकलते हुए देखा जिससे उनको बड़ा आश्चर्य हुआ। उन्होंने पंडितों से उसके जीवित बचे रहने को कारण पूछा। इसका रहस्य बताने के लिए शिवजी की आज्ञा से दुर्वासा ऋषि वहाँ आये। राजा ने दुर्वासा ऋषि को आया जानकर उनकी अगवानी करके अर्घ्य आदि से उनका पूजन किया तथा बारम्बार नमस्कार करके धात्री के पुत्र के जीवित

निकलने का कारण पूछा। दुर्वासा ऋषि ने कहा कि हे राजन्! उस धात्री ने वन में जाकर नियमपूर्वक अति भक्तिभाव से भगवान शिवजी का, स्वामी कार्तिकेय, पार्वतीजी एवं गणेशजी का, ध्यान, पूजन स्मरण इत्यादि श्रद्धा सहित तथा नियमपूर्वक व्रत किया है। यह उस व्रत का ही प्रभाव है जिसके कारण धात्री का पुत्र जीवित ही मिल गया। अतः आप भी वहाँ जाकर यह धार्मिक कर्म करें। श्री कृष्ण जी ने राजा युधिष्ठिर से कहा कि हे राजन्! राजा और रानी ने दुर्वासा ऋषि को विदा कर दिया, तदुपरान्त वे दोनों को साथ लेकर उस धात्री के निवास स्थान वन को गए। वहाँ राजा, रानी तथा धात्री पुत्र ने उस धात्री को भगवान शिव का कुश पलाश (ढाक) के नीचे अति श्रद्धा के साथ पूजन अर्चना करते हुए देखा। राजा ने धात्री को उसके पुत्र से मिला दिया।

धात्री ने राजा को इस उत्तम व्रत के महात्म्य को सविस्तार बता दिया।

उसने कहा कि हे राजन्! जिस दिन से आपके भय से त्रस्त मैं यहाँ आई मैंने केवल वायु को ही भोजन करते हुए भगवान शिव, कार्तिकेय, पार्वती जी एवं गणेशजी की पूजा की है। एक दिन आधी रात के समय स्वप्न में भगवान शिव ने मुझे दर्शन दिया और कहा कि तेरा पुत्र जीवित हो गया है क्योंकि तूने हमारा व्रत एवं पूजन बड़ी श्रद्धा तथा भक्ति से किया है। यदि तुम्हारी रानी भी इसी व्रत को विधि पूर्वक करे तो उसका पुत्र भी उसको जीवित मिल जाएगा तथा और भी बहुत से पुत्र उत्पन्न होंगे। भगवान श्री कृष्ण ने राजा युधिष्ठिर से कहा—राजन! भादों के महीने में कृष्ण पक्ष की षष्ठी को यह उत्तम व्रत करना चाहिए। उस दिन प्रातःकाल स्नान करके क्रोध, लोभ, मोह त्यागकर व्रत को नियम पूर्वक कर लेना चाहिए। जब तक व्रती रहे किसी जीव की भी हिंसा न करे। व्रत सम्पूर्ण करने के लिए चींटी आदि का मार्ग भी उल्लंघन न करे तथा दोपहर के समय मित्रों सहित पलाश (ढाक) तथा कुशा

क नीचे भगवान् शिव, पार्वती, स्वामी कार्तिकेय तथा गणेशजी की मूर्ति स्थापित करके धूप, दीप, नैवेद्य आदि से विनम्र भक्ति भाव से पूजा करे और प्रार्थना करे कि हे सौम्यमूर्ति, पंचमुख, शूलधारी, नन्दी, श्रृंगी, महाकाय आदि गणों से युक्त आप भगवान शिव को मैं साष्टांग नमस्कार करता हूँ। शिव हरकान्ता, प्रकृति श्रेष्ठ हेतु सौभाग्यदायिनी गौरी और माता पार्वती को मैं नमस्कार करता हूँ। हे मयूरवाहन! हे क्रोंच पर्वत को विदीर्ण करने वाले कुमार विशाख और स्कन्द आप स्वामी कार्तिकेय को बारम्बार नमस्कार है। फिर एकदंत गणेशजी की अभ्यर्थना करे कि हे प्रभो! मूषकवाहन, लम्बोदर, आपको साष्टांग प्रणाम है। इस प्रकार इन चारों देवताओं की भली प्रकार पूजा करे। फिर ब्राह्मणों सहित गाजे बाजे से अपने घर को जावे। उस दिन समां के चावल का भोजन करे और दही, दूध, घी तथा मट्ठा विशेष रूप से खाये। श्री कृष्ण ने कहा कि हे राजन! जो स्त्री-पुरुष इस व्रत को विधि से करता है

वह पुत्र और पौत्रवान होकर सुखी होता है। धात्री की ऐसी बात सुनकर राजा रानी ने विधिपूर्वक इस व्रत को किया जिसके प्रताप से वह राज पुत्र शीघ्र ही ग्राह के गले से निकलकर बोलने लगा। यह चमत्कार देखकर राजा-रानी ने भगवान शिव के चरणों में नमस्कार किया। इस व्रत के प्रभाव से राजा को और भी कई आयुष्मान पुत्र प्राप्त हुए तथा राज्य में अनावृष्टि, महामारी, दुर्भिक्ष आदि के उपद्रव दूर हो गये और राजा अनेक वर्षों तक निर्विघ्न राज्य करते रहे।

श्रीकृष्ण भगवान ने कहा कि हे युधिष्ठिर! यदि उत्तरा भी यह व्रत नियमपूर्वक करे तो उसके सब दुःख दूर हो जावेंगे। भगवान के ऐसे वचन सुनकर राजा युधिष्ठिर कृतकृत्य हो गये और अश्वत्थामा द्वारा खंडित किया हुआ उत्तरा का गर्भ इस व्रत के प्रभाव से जीवित हो गया।

इस व्रत के करने से वंश स्थिर होता है। इस प्रसंग को भगवान कृष्ण ने

राजा युधिष्ठिर से कहा तथा दुर्वासा ऋषि ने राजा सुभद्र से कहा कि हे राजन! इस व्रत को करने के उपरान्त फिर उसका शास्त्रोक्त रीति से उद्यापन करे। उद्यापन में सुवर्ण, महिषी, गौ और वस्त्र ब्राह्मणों को दान में दे। सोने अथवा चाँदी की मूर्ति बनाकर वेदपाठी ब्राह्मणों सहित उनका पूजन करे। दुर्वासा ऋषि ने कहा कि हे राजन! विद्वान धर्म-निष्ठ राजा युधिष्ठिर ने भी इस व्रत को उत्तरा से करवाया था जिसके प्रभाव से उसका अश्वत्थामा द्वारा खंडित किया हुआ गर्भ उदर में हिलने डुलने लगा तथा वही गर्भ राजा परीक्षित के रूप में प्रकट हुआ। जो कोई मनुष्य यह उत्तम व्रत करता है उसके सब कार्य सिद्ध होते हैं। पुत्र, पौत्रों की प्राप्ति होती है तथा शिवलोक में उसकी पूजा होती है।

श्री हरितालिका तीज व्रत कथा

(भाद्रपद मास के शुक्ल पक्ष की तृतीया को किया जाता है)

श्री परम पावनभूमि कैलाश पर्वत पर विशाल वट वृक्ष के नीचे भगवान शिव-पार्वती सभी गणों सहित बाघम्बर पर विराजमान थे। बलवान वीरभद्र भृंगी, श्रृंगी, नन्दी आदि अपने-अपने पहरों पर सदाशिव के दरबार की शोभा बढ़ा रहे थे। गन्धर्वगण, किन्नर, ऋषि, हरि भगवान की अनुष्टुप छन्दों से स्तुति गान स्वर, अलापों से वाद्यों में संलग्न थे, उसी सुअवसर पर महारानी पार्वती जी ने भगवान शिव से दोनों हाथ जोड़ कर प्रश्न किया कि हे महेश्वर, मेरे बड़े सौभाग्य हैं जो मैंने आप सरीखे पति को वरण किया, क्या मैं जान सकती हूँ कि मैंने वह कौन सा पुण्य अर्जन किया है। आप

तरयामी हैं, मुझ को बताने की कृपा करें। पार्वती जी की ऐसी प्रार्थना सुनने पर शिवजी बोले हे वरानने! तुमने अति उत्तम पुण्य का संग्रह किया था, जिससे तुमने मुझे प्राप्त किया है। वह अति गुप्त है अब तुम्हारे आग्रह पर प्रकट करता हूँ।

कथा प्रारम्भ-भाद्रपद माह के शुक्ल पक्ष के तीज का व्रत हरितालिका के नाम से प्रसिद्ध है यह जैसे तारागणों में चन्द्रमा, नवग्रह में सूर्य, वर्णों में ब्राह्मण, देवताओं में गंगा, पुराणों में महाभारत, वेदों में साम, इन्द्रियों में मन, ऐसा ही यह व्रत श्रेष्ठ है। जो तीज हस्त नक्षत्र युक्त पड़े वह और भी महान पुण्यदायक होती है। ऐसा सुनकर श्री पार्वती जी ने कहा हे महेश्वर! मैंने कब और कैसे यह तीज व्रत किया था विस्तार के साथ श्रवण करने की इच्छा है। इतना सुनकर भगवान शंकर बोले कि हे भाग्यवान उमा! भारत के उत्तर में श्रेष्ठ एक पर्वत है उसके राजा का

नाम हिमाचल है, वहाँ तुम भाग्यवती रानी मैना से उत्पन्न हुई थीं। तुमने बाल्यकाल से ही मेरी आराधना करना प्रारम्भ कर दिया था। कुछ उम्र बढ़ने पर तुमने हिमालय की दुर्गम गुफाओं में जाकर मुझे पाने हेतु तप किया। तुमने ग्रीष्म काल में बाहर चट्टानों पर आसन लगाकर तप किया। वर्षा काल में बाहर पानी में तप किया, शीत काल में पानी में खड़े होकर मेरे ध्यान में संलग्न रहीं, इस प्रकार छः कालों में तपस्या करके भी जब मेरे दर्शन न मिले तब तुमने ऊर्ध्वमुख होकर केवल वायुसेवन किया, फिर वृक्षों के सूखे पत्ते खाकर इस शरीर को क्षीण किया, ऐसी तपस्या में लीन देखकर महाराज हिमाचल को अति चिंता हुई और तुम्हारे विवाह हेतु चिंता करने लगे। इसी सुअवसर पर महर्षि नारदजी उपस्थित हुए। राजा ने हर्ष के साथ नारदजी का स्वागत व पूजन किया और उपस्थित होने का कारण जानने के इच्छुक हुए।

नारद जी ने कहा, राजन मैं भगवान विष्णु का भेजा आया हूँ। मैं चाहता हूँ कि आपकी सुन्दर कन्या को योग्य वर प्राप्त हो, बैकुण्ठ-निवासी शेषशायी भगवान ने आप की कन्या का वरण स्वीकार किया है। राजा हिमाचल ने कहा महाराज, मेरे सौभाग्य हैं जो मेरी कन्या को विष्णु जी ने स्वीकार किया है, और मैं अवश्य ही उन्हें अपनी कन्या उमा का वाग्यदान करूँगा। यह सुनिश्चित हो जाने पर नारदजी बैकुण्ठ पहुँचकर श्री विष्णु भगवान से पार्वती जी के विवाह का निश्चित होना सुनाया। इधर महाराज हिमाचल ने वन में पहुँचकर पार्वती जी से भगवान विष्णु से विवाह होने का निश्चित समाचार दिया, ऐसा सुनते ही पार्वती जी को महान दुःख हुआ, उस दुःख से तुम विह्वल होकर अपनी सखी के पास पहुँचकर विलाप करने लगीं, तो तुम्हारा विलाप देख सखी ने तुम्हारी इच्छा जानकर कहा, देवि मैं तुम्हें ऐसी गुफा में तपस्या को ले चलूँगी जहाँ तुम्हें महाराजा हिमाचल भी न ढूंढ सकेंगे, ऐसा कह उमा सहेली सहित हिमालय

की गहन गुफा में विलीन हो गई। तब महाराज हिमाचल घबड़ाकर पार्वतीजी को ढूँढते हुए विलाप करने लगे कि मैंने विष्णु को वचन दिया है वह कैसे पूर्ण हो सकेगा, ऐसा कह वह मूर्छित हो गए। तत्पश्चात सभी पुरवासियों को साथ लेकर ढूंढ़ने को महाराज ने पदार्पण कर ऐसी चिंता करके कहा कि क्या मेरी कन्या को व्याघ्र खा गया या सर्प ने डस लिया या कोई राक्षस हर के ले गया! उस समय तुम अपनी सहेली के साथ ही गहन गुफा में पहुँच, बिना जल अन्न के मेरे व्रत को आरम्भ करने लगीं थीं। उसी दिन भाद्रमास की तृतीया शुक्ल पक्ष हस्त नक्षत्र युक्त थी। मेरी पूजा के फल-स्वरूप में मेरा सिंहासन हिल उठा तो मैंने जाकर तुम्हें दर्शन दिया, और तुमसे कहा-देवी, मैं तुम्हारे व्रत और पूजन से अति प्रसन्न हूँ, तुम अपनी कामना का मुझसे वर्णन करो। इतना सुन तुमने लज्जित भाव से प्रार्थना की, कि आप अन्तरयामी हैं, मेरे मन के भाव आपसे छुपे नहीं हैं, मैं आपको पति रूप से चाहती हूँ। इतना सुनकर मैं तुम्हें 'एवंस्तु'

इच्छित पूर्ण वरदान दे अन्तर्धान हो गया। इसके बाद तुम्हारे पिता हिमाचल मंत्रियों सहित ढूँढ़ते-ढूँढ़ते नदी तट पर मारे शोक से मूर्छित होकर गिर पड़े, उसी समय तुम सहेली के साथ मेरी बालू की मूर्ति विसर्जन करने हेतु नदी तट पर आ पहुँची, तो तुम्हारे नगर निवासी, मंत्रीगण हिमाचल सहित तुम्हारे दर्शन कर अति प्रसन्नता को प्राप्त हुए, और तुमसे लिपट-लिपट कर रोने लगे, और बोले-उमा, तुम इस भयंकर वन में कैसे चली आयीं जो अति भयानक है जहाँ सिंह व्याघ्र जहरीले भयानक सर्पों का निवास है, जहाँ मनुष्य के प्राण संकट में हो सकते हैं, अत: हे पुत्री! इस भयंकर वन को त्याग कर अपने गृह स्थान को प्रस्थान करो। पिता के ऐसे कहने पर तुमने कहा-पिताजी, मेरा विवाह तुमने भगवान विष्णु के साथ स्वीकार किया है इससे मैं इसी वन में रहकर अपने प्राण विसर्जन करूँगी। ऐसा सुन महाराज हिमाचल अति दु:खी हुए, और बोले प्यारी पुत्री! तुम शोक मत करो मैं तुम्हारा विवाह

कदापि भगवान विष्णु के साथ न करूँगा, और तुम्हारा अभीष्ट वर जो तुम्हें पसन्द है उन्हीं सदाशिव के साथ करूँगा। तब तुम मेरे पर अति प्रसन्न हो, सहेली के साथ नगर में उपस्थित होकर अपनी माता, अन्य सहेलियों से मिलती हुई, कुछ समय बाद शुभ मुहूर्त में तुम्हारा विवाह वेदविधि के साथ महाराज हिमाचल व महारानी मैना ने मेरे साथ कर पुण्य का अर्जन किया। हे सौभाग्यशालिनी! जिस सहेली ने तुमको हरण कर हिमालय की गुफा में रख मेरी प्राप्ति का व्रत किया इसीसे इस व्रत का नाम हरितालिका पड़ा, और यह व्रत सब व्रतों में उत्तम हुआ। इस प्रकार सुनकर माता पार्वतीजी ने कहा, प्रभो, आपने मेरे मिलने की सुखद कथा सुनाकर मुझे प्रसन्न तो किया पर इस व्रत के करने का विधान व इसका फल नहीं सुनाया। कृपा करके मुझे इसके करने की विधि व पृथक-पृथक फल भी सुनाइये। इतना सुनके भगवान सदाशिव ने कहा, प्रिये मैं इस व्रतराज का फल सुना रहा हूँ, यह व्रत सौभाग्यशाली नारी

व पति चाहने वाली कन्याओं को करना चाहिए। यह व्रत भाद्रपद के शुक्ल पक्ष की द्वितीया की शाम को आरम्भ कर तीज का व्रत धारण करे। यह व्रत निराहार बिना फल आहार और निर्जला होकर रखना चाहिये। भगवान शिव-पार्वती की प्रतिमा सुवर्ण की स्थापित करके केले, पुष्प आदि के खम्भे स्थापित कर रेशमी वस्त्र के चंदोवा तानकर बंदनवार लगाकर भगवान शिव का बालू का लिंग स्थापित करके पूजन वैदिक मंत्र स्तुति गान वाद्य, शंख, मृदंग, झांझ, आदि से रात्री जागरण करना चाहिए और भगवान शिव के पूजन के बाद फल, फूल, पकवान, लड्डू, मेवा, मिष्ठान तरह-तरह के भोग की सामग्री समर्पण करे, फिर ब्राह्मणों को द्रव्य अन्न वस्त्र पात्र आदि का दान श्रद्धा युक्त देना चाहिए। भगवान शिव को प्रति वस्तु को सिद्धपंचाक्षरी मंत्र से (नमः शिवाय) कहकर समर्पित करना चाहिए। प्रार्थना के समय अपनी इच्छा भगवान के सामने प्रेषित करे, फिर पार्वती जी से यहाँ लिखी प्रार्थना करे।

जय जग माता, जय जग माता, मेरी भाग्य विधाता॥टेक॥
तुम हो पार्वती शिव प्यारी, तुम दाता नन्द पुरारी।
सती सतों में रेख तुम्हारी, जय हो आनन्द दाता जय०
इच्छित वर मैं तुमको पाऊं, भूल चूक को दुःख न उठाऊँ।
भाव-भक्ति से तुमो पाऊं कर दो पूरन बाता जय जग०

प्रार्थना के बाद पुष्पों को दोनों हाथों में लेकर पुष्पांजली समर्पण करें, फिर चतुर्थी को शिवलिंग किसी नदी या तालाब में विसर्जन करें फिर तीन ब्राह्मणों को भोजन कराके दक्षिण देवें, इस प्रकार यह व्रत पूर्ण करने से नारी सौभाग्यवती होती है। धन व पुत्र पौत्रों से सुखी होकर जीवन व्यतीत करती है। कन्याओं के व्रत करने से कुलीन धनवान वर को प्राप्त होने का सौभाग्य होता है। हे देवी! जो सौभाग्यवती नारी इस व्रत को नहीं धारण करती वह बार-बार वैधव्य व पुत्र शोक को प्राप्त होती है।

श्री ऋषिपंचमी व्रत कथा

(भाद्रपद मास के शुक्ल पक्ष की पंचमी को किया जाता है)

राजा सुताश्व ने कहा कि हे पितामह! मुझे ऐसा व्रत बताइये जिससे समस्त पापों का नाश हो जाये। तब ब्रह्माजी ने कहा-राजन मैं तुम्हें वह व्रत बताता हूँ जिससे समस्त पाप विनाश को प्राप्त होंगे, यह ऋषिपंचमी का व्रत है जिसके करने से नारी जाति के तमाम पाप दूर होकर पुण्य की भागी होती है। इसके लिए तुमसे एक पुरातन कथा कहता हूँ कि विदर्भ देश में उत्तंक नाम के एक सदाचारी ब्राह्मण निवास करते थे। उनकी पतिव्रता नारी सुशीला से एक पुत्री और एक पुत्र का जन्म हुआ। पुत्र सुविभूषण ने वेदों का सांगोपांग अध्ययन किया। कन्या का समयानुसार एक सामान्य कुल में विवाह कर दिया गया, पर विधि के विधान से वह कन्या विधवा हो गई, तो वह अपने सतीत्व की रक्षा पिता के घर रह करके करने लगी। एक दिवस कन्या माता-पिता की

सेवा करके एक शिलाखण्ड पर शयन कर रही थी तो, रात भर में उसके सारे शरीर में कीड़े पड़ गए, सुबह जब कुछ शिष्यों ने उस कन्या को अचानक इस दशा में देख उसकी माता सुशीला को निवदेन किया कि माता गुरू पुत्री के दुःख को देखिये। गुरु पत्नी ने जाकर पुत्री को देखा और उस अपनी पुत्री की अचानक यह दशा देखके नाना तरह से विलाप करने लगी और पुत्री को उठाकर ब्राह्मण के पास लाई। ब्राह्मण भी पुत्री की दशा देखकर अति विस्मय को प्राप्त हुए, और दुखी हुए, तब ब्राह्मण ने हाथ जोड़कर कहा, महाराज! क्या कारण है कि इस पुत्री के सारे शरीर में कीड़े पड़ गए? तब महाराजा ने ध्यान धरके देखा तो पता चला कि इस पुत्री ने जो सात जन्म पहिले ब्राह्मणी थी तो एक दिन रजस्वला होते हुए भी घर के तमाम बर्तन, भोजन, सामग्री छू ली और ऋषिपंचमी व्रत को भी अनादर से देखा, उसी दोष के कारण इस पुत्री के शरीर में कीड़े पड़ गए क्योंकि रजस्वला (रजोधर्म) वाली नारी प्रथम दिन चांडालनी के बराबर व दूसरे दिन ब्रह्मघातिनी के समान व तीसरे दिन धोबिन

के समान शास्त्र दृष्टि से मानी जाती है। तुम्हारी कन्या ने ऋषिपंचमी व्रत के दर्शन अपमान के साथ किये इससे ब्राह्मण कुल में जन्म तो हुआ, पर शरीर में कीड़े पड़ गए हैं। तब सुशीला ने कहा, महाराज ऐसे उत्तम व्रत को आप विधि के साथ वर्णन कीजिए, जिससे संसार के प्राणीमात्र इस व्रत से लाभ उठा सकें। ब्राह्मण बोले हे सहधर्मिणी! यह व्रत भाद्रमास की शुक्ल पक्ष की पंचमी को धारण किया जाता है। पंचमी के दिन पवित्र नदी में स्नान कर व्रत धारण कर सायंकाल सप्तऋषियों का पूजन विधान से करना चाहिए, भूमि को शुद्ध गौ के गोबर से लीप के उस पर अष्ट कमल दल बनाकर नीचे लिखे सप्तऋषियों की स्थापना कर प्रार्थना करनी चाहिए। महर्षि कश्यप, अत्रि, भारद्वाज, विश्वामित्र, गौतम, जमदग्नि, वशिष्ठ महर्षियों की स्थापना कर आचमन, स्नान, चंदन, फूल, धूप-दीप, नैवेद्य आदि पूजन कर व्रत की सफलता की कामना करनी चाहिए। इस व्रत को करके उद्यापन की विधि भी करनी चाहिए। चतुर्थी के दिन एक बार भोजन करके पंचमी के दिन व्रत आरम्भ करे, सुबह

नदी या जलाशय में स्नान कर गोबर से लीपकर सर्वतोभद्र चक्र बना कर उस पर कलश स्थापन करे। कलश के कण्ठ में नया वस्त्र बांधकर पूजा-सामग्री एकत्र कर अष्ट कमल दल पर सप्तऋषियों की सुवर्ण प्रतिमा स्थापित करें फिर षोड़षोपचार से पूजन कर रात्रि को पुराण का श्रवण करें फिर सुबह ब्राह्मण को भोजन दक्षिणा देकर संतुष्ट करें। इस प्रकार इस व्रत का उद्यापन करने से नारी सुन्दर रूप लावण्य को प्राप्त होकर सौभाग्यवती होकर धन व पुत्र से संतुष्ट हो उत्तम गति को प्राप्त होती है।

द्वितीय कथा-दूसरी कथा भविष्य पुराण में इस प्रकार आती है कि एक बार महाराज कृष्णा से महाराज युधिष्ठिर ने कहा कि वह कौन पंचमी है जिसके करने से नारी जाति दोष से मुक्त हो करके महत् पुण्य को प्राप्त होती है आप मुझे संक्षेप में श्रवण कराइए। तब भगवान कृष्णजी ने कहा, राजन! भाद्रपद मास की शुक्लपक्ष की पंचमी को ऋषि का व्रत रहने से नारी रजस्वला से मुक्त होती है क्योंकि जब इन्द्र ने वृत्रासुर को मारा था, तब ब्रह्महत्या का एक भाग

नारी के रज में, दूसरा नदी के फेन में, तीसरा भाग पर्वतों, चौथा भाग अग्नि की प्रथम ज्वाला में विभक्त किया था। इससे हर जाति की नारी रजस्वला होने पर प्रथम दिन चाँडालनी, दूसरे दिन ब्रह्मघातिनी और तीसरे दिन धोबिन की तरह दोषी होती है। इससे उस दिन प्रति वस्तु छूने से अपवित्र होकर दोष होता है। इस ऋषिपंचमी व्रत के करने से यह दोष मुक्त होकर नारी पवित्रता को प्राप्त होती हे। हे राजन! विदर्भ देश में एक श्येनजित नाम का राजा था, और उसी राज में एक सुमित्र नाम का विद्वान ब्राह्मण था, उसकी पत्नी का नाम जयश्री था। एक दिन वह रसोई घर में रजस्वला धर्म को प्राप्त हो गई, और वह समयानुसार भोजन आदि वस्तु छूती रही, इस प्रकार समय पाकर दोनों पति पत्नी की मृत्यु हो गई। मरने पर ब्राह्मणी का कुतिया का जन्म हुआ, और ब्राह्मण को बैल का जन्म लेना पड़ा। पर दोनों को अपने तप के प्रभाव से पूर्व जन्म की बातों का स्मरण बना रहा और यह दोनों प्राणी अपने ही पुत्र के घर में पुनः जन्मे। एक दिन पितृ पक्ष में ब्राह्मण कुमार ने अपने पिता की श्राद्ध तिथि में

विधि के साथ ब्राह्मण भोज रखा और अपनी पत्नी से स्वादिष्ट पकवान खीर आदि बनवाकर तैयार की। भाग्यवश एक साँप ने उस खीर में जहर उगल दिया। यह हाल वह ब्राह्मणी कुतिया बनी देख रही थी, तो उसने सोचा कि अगर ब्राह्मण खायेंगे तो मृत्यु को प्राप्त हो जावेंगे, इससे मेरे लड़के को हत्याओं का भारी पाप लगेगा इससे उस खीर को कुतिया ने जान बूझ कर जूठी कर दी, उस बहू ने कुतिया को इतनी मार मारी कि उसकी कमर तोड़ दी और खीर फेंक कर दूसरी बना ली, फिर श्राद्ध कर सब ब्राह्मणों को भोजन कराया। रात को कुतिया ने जाकर अपने पूर्व पति बैल से दिन में होने वाली सारी घटना बताई, तो बैल बोला-प्रिये! तुम्हारे पाप के संसर्ग से आज मुझे बैल होना पड़ा, और आज मेरे लड़के ने दिन भर मेरा मुँह बाँधकर जोता है और अभी तक एक मुठ्ठी घास भी नहीं डाली, यह सारी बातें वह ब्राह्मण बालक भी सुनता रहा। जिससे वह बड़ा दुःखी हुआ। माता पिता को भोजन देकर वह दुःखित मन से चला गया। उधर ऋषियों को दंडवत करके पूछा, महाराज, मेरे माता पिता कुतिया

व बैल की योनि में हैं। वह किस प्रकार इस योनि से छुटकारा पा सकेंगे तो ऋषियों ने बताया तुम्हारे माता पिता ने रजोधर्म दोष से कुतिया व बैल का जन्म पाया है। इससे तुम घर जाकर विधि से उत्तम व्रत ऋषिपंचमी का करके उसका फल अपने माँ बाप को समर्पण करो, जिससे वह पशु योनि से मुक्त होकर स्वर्ग प्राप्त करें। मुनियों से विधि सुनकर ब्राह्मण पुत्र ने घर आकर विधि के साथ सर्वान्न सहित भाद्रपद शुक्ल पंचमी को ऋषि पंचमी का व्रत किया और श्रद्धा से उस व्रत का फल उन अपने माता पिता को समर्पण किया जिसके प्रभाव से वे इस क्रूर योनि से छूटकर दिव्य देव विमान पर आरुढ़ हो स्वर्ग को प्राप्त हुए। हे राजन! जो स्त्री इस व्रत को विधि के साथ करती है तथा श्रद्धा से सप्तऋषियों का पूजन करे वह नारी भयंकर दोष से छूटकर शीघ्र ही धन, पुत्र पौत्र आदि सुख सौभाग्य रूप को पाती है। इस व्रत को करना नारी जाति का मुख्य कर्तव्य है। इससे मन, शरीर आदि दोष मुक्त होते हैं। जो फल तीर्थों के करने से प्राप्त होते हैं वे इस व्रत से अनायास नारी जाति को मिलते हैं।

सन्तान सप्तमी व्रत कथा

(भाद्रपद मास के शुक्लपक्ष की सप्तमी को किया जाता है।)

एक दिन महाराज युधिष्ठर ने भगवान से कहा कि हे प्रभो! कोई ऐसा उत्तम व्रत बताइये, जिसके प्रभाव से मनुष्यों के सांसारिक दुःख क्लेश दूर होकर पुत्र एवं पौत्रवान हों। यह सुनकर भगवान बोले-हे राजन्! तुमने बड़ा ही उत्तम प्रश्न किया है। मैं तुमको एक पौराणिक इतिहास सुनाता हूँ, ध्यान पूर्वक सुनो। एक समय श्री लोमश ऋषि ब्रज राज की मथुरा पुरी में वसुदेव-देवकी के घर गये। ऋषिराज को आया हुआ देख करके दोनों अत्यन्त प्रसन्न हुए तथा उनको उत्तम आसन पर बैठाकर उनकी अनेक प्रकार से वन्दना तथा सत्कार किया। फिर मुनि के चरणोदक से अपने घर तथा शरीर को पवित्र किया। मुनि प्रसन्न होकर उनको कथा सुनाने लगे। कथा के कहते-कहते लोमश ऋषि ने

कहा कि हे देवकी! दुष्ट दुराचारी कंस ने तुम्हारे कई पुत्र मार डाले हैं, जिसके कारण तुम्हारा मन अत्यन्त दुखी है। इसी प्रकार राजा नहुष की पत्नी चन्द्रमुखी भी दुखी रहा करती थी। किन्तु उसने सन्तान सप्तमी का व्रत विधि-विधान सहित किया जिसके प्रताप से उसको संतान का सुख प्राप्त हुआ। यह सुनकर देवकी ने हाथ जोड़कर मुनि से कहा कि हे ऋषिराज! कृपा करके रानी चन्द्रमुखी का सम्पूर्ण वृतांत तथा इस व्रत का विधान विस्तार सहित मुझे बताइये जिससे मैं भी इस दुख से छुटकारा पाऊँ। लोमश ऋषि ने कहा हे देवकी! अयोध्या के राजा नहुष थे। उनकी पत्नी चन्द्रमुखी अत्यन्त सुन्दरी थी। उसी नगर में विष्णुगुप्त नाम का एक ब्राह्मण रहता था। उसकी स्त्री का नाम भद्रमुखी था। वह भी अत्यन्त रूपवान सुन्दरी थी। रानी और ब्राह्मणी में अत्यन्त प्रेम था। एक दिन दोनों सरयू नदी में स्नान करने के निमित्त गयीं, वहाँ उन्होंने देखा कि अन्य बहुत-सी स्त्रियाँ सरयू नदी में स्नान करके निर्मल वस्त्र पहन कर

एक मंडप में श्री शंकर एवं पार्वती की मूर्ति स्थापित करके उनकी पूजा कर रही थी। रानी और ब्राह्मणी ने यह देखकर उन स्त्रियों से पूछा कि बहिना! यह तुम किस देवता का और किस कारण से यह पूजन व्रत आदि कर रही हो। यह सुन उन स्त्रियों ने कहा कि हम संतान सप्तमी का व्रत कर रही हैं और हमने शिव पार्वती का पूजन चन्दन अक्षत आदि से षोड़षोपचार विधि से किया है। यह सब इसी पुनीत व्रत का विधान है। यह सुनकर रानी और ब्राह्मणी ने भी इस व्रत के करने का मन ही मन संकल्प किया और घर वापिस लौट आई। ब्राह्मणी भ्रदमुखी तो इस व्रत को नियम पूर्वक करती रही, किन्तु रानी राजमद के कारण इस व्रत को कभी करती, कभी भूल जाती। कुछ समय बाद यह दोनों मर गयीं। दूसरे जन्म में रानी ने बंदरिया और ब्राह्मणी ने मुर्गी की योनि पाई।

इधर ब्राह्मणी मुर्गी की योनि में भी कुछ नहीं भूली और भगवान शंकर

तथा पार्वती जी का ध्यान करती रही। उधर रानी बंदरिया की योनि में सब कुछ भूल गई। थोड़े समय के बाद इन दोनों ने यह देह त्याग दी। अब इनका तीसरा जन्म मनुष्य योनि में हुआ। उस ब्राह्मणी ने तो एक ब्राह्मण के यहाँ कन्या के रूप में जन्म लिया। तथा रानी ने एक राजा के यहाँ राज कन्या के रूप में जन्म लिया। उस ब्राह्मण कन्या का नाम भूषण देवी रखा गया तथा विवाह योग्य होने पर उसका विवाह गोकुल निवासी अग्निझील नामक ब्राह्मण से कर दिया। भूषण देवी इतनी सुन्दर थी, कि वह आभूषण रहित होते हुए भी अत्यन्त सुन्दर लगती थी कि कामदेव की पत्नी रति भी उसके सम्मुख लजाती थी। भूषण देवी के अत्यन्त सुन्दर सर्वगुण सम्पन्न चन्द्रमा के समान, धर्मवीर कर्मनिष्ठ, सुशील स्वभाव वाले आठ पुत्र उत्पन्न हुए। यह शिव के व्रत का पुनीत फल था। दूसरी ओर शिव विमुख रानी के गर्भ से कोई भी पुत्र नहीं हुआ

और निःसन्तान दुःखी रहने लगी। रानी और ब्राह्मणी में जो प्रीति पहले जन्म में थी वह अब भी बनी रही। रानी जब वृद्धावस्था को प्राप्त होने लगी, तब उसके एक गूंगा व बहरा तथा बुद्धिहीन, अल्पायुवाला एक पुत्र हुआ और वह नौ वर्ष की आयु में इस क्षण भंगुर संसार को छोड़कर चला गया। अब तो रानी पुत्र शोक में अत्यन्त दुखी हो व्याकुल रहने लगी। दैवयोग से भूषण देवी ब्राह्मणी रानी के यहाँ अपने सब पुत्रों को लेकर पहुँची। रानी का हाल सुनकर उसे भी बहुत दुःख हुआ। किन्तु इसमें किसी का क्या वश। कर्म और प्रारब्ध के लिखे को स्वंय ब्रह्मा भी नहीं मेट सकते हैं। रानी कर्मच्युत भी थी, इसी कारण उसे यह दुःख देखना पड़ा। इधर रानी उस ब्राह्मणी के इस वैभव और आठ पुत्रों को देखकर उससे मन ही मन ईर्ष्या करने लगी तथा उसके मन में पाप उत्पन्न हुआ। उस ब्राह्मणी ने रानी का सन्ताप दूर करने के निमित्त अपने आठों पुत्र

रानी के पास छोड़ दिये। रानी ने पाप के वशीभूत होकर उन ब्राह्मण पुत्रों की हत्या करने के विचार से लड्डू में विष (जहर) मिला कर उनको भोजन करा दिया। परन्तु भगवान शंकर की कृपा से एक भी बालक की मृत्यु नहीं हुई। यह देखकर तो रानी अत्यन्त ही आश्चर्य चकित हो गई और इस रहस्य का पता लगाने की मन में ठान ली। भगवान की पूजा सेवा से निवृत्त होकर जब भूषण देवी आई तो रानी ने उससे कहा कि मैंने तेरे पुत्रों को मारने के लिए इनको जहर मिलाकर लड्डू खिला दिये किन्तु इसमें से एक भी नहीं मरा। तूने ऐसा कौन-सा दान, पुण्य, व्रत किया है जिसके कारण तेरे पुत्र भी नहीं मरे और तू नित्य नये सुख भोग रही है। तू बड़ी सौभाग्यवती है। इस सबका भेद तू, मुझे निष्कपट होकर समझा। मैं तेरी बड़ी ऋणी रहूँगी। रानी के ऐसे दीन वचन सुनकर भूषण ब्राह्मणी कहने लगी-हे रानी! सुनो, तुमको तीन जन्म का हाल कहती हूँ, सो ध्यानपूर्वक सुनना। पहिले जन्म में तुम राजा नहुष की पत्नी थी और तुम्हारा

नाम चंद्रमुखी थी। मेरा नाम भद्रमुखी था और मैं ब्राह्मणी थी। हम तुम अयोध्या में रहते थे। मेरी तुम्हारी बड़ी प्रीति थी। एक दिन हम तुम दोनों सरयू नदी में स्नान करने गए और दूसरी स्त्रियों को संतान सप्तमी का उपवास, शिवजी का पूजन अर्चन करते देखकर हमने तुमने भी उस व्रत को करने की प्रतिज्ञा की थी। तुम तो राजमद के कारण सब भूल गयीं और झूठ बोलने का तुमको दोष लगा, जिसे तुम आज भी भोग रही हो। मैंने इस व्रत का आचार विचार सहित नियमपूर्वक सदैव किया, और आज भी करती हूँ। दूसरे जन्म में तुम्हें बन्दरिया की योनि मिली तथा मुझे मुर्गी की योनि मिली। भगवान शंकर की कृपा से इस व्रत के प्रभाव तथा भगवन्नाम को मैं इस जन्म में भी न भूली और निरन्तर उस व्रत को नियमानुसार करती रही। तुम अपने इस संकल्प को इस जन्म में भी भूल गयीं। मैं तो समझती हूँ कि तुम्हारे ऊपर जो भारी संकट है उसका एक मात्र यही कारण है और कोई दूसरा इसका कारण नहीं हो सकता है। इसलिए

कहती हूँ कि आप अब इस संतान सप्तमी के व्रत को करिए 'जिससे तुम्हारा यह संकट दूर हो जावे।' सप्तमी के व्रत को करिए 'जिससे तुम्हारा यह संकट दूर हो जावे। लोमश जी ने कहा हे देवी! भूषण ब्राह्मणी के मुख से अपने पूर्व जन्म की कथा तथा व्रत संकल्प इत्यादि सुनकर रानी को पुरानी बातें याद आ गयीं और पश्चाताप करने लगी। अब रानी भूषण ब्राह्मणी के चरणों में पड़ क्षमा-याचना करने लगी और भगवान शंकर पार्वती की अपार महिमा के गीत गाने लगी। उसी दिन से रानी ने नियमानुसार सन्तान सप्तमी का व्रत किया, जिसके प्रभाव से रानी को सन्तान सुख भी मिला तथा सम्पूर्ण सुख भोग कर रानी शिव लोक को गई। भगवान शंकर के व्रत का ऐसा प्रभाव है कि पथभ्रष्ट मनुष्य भी अपने पथ पर अग्रसर हो जाता है और अन्त में ऐश्वर्य भोगकर मोक्ष पाता है। लोमशऋषि ने फिर कहा कि हे देवकी! इसलिए मैं तुमसे भी कहता

हूँ कि तुम भी इस व्रत को करने का दृढ़ संकल्प अपने मन में करो तो तुमको भी सन्तान सुख प्राप्त होगा। इतनी कथा सुनकर देवकी हाथ जोड़कर लोमश ऋषि से पूछने लगी हे ऋषिराज! मैं इस पुनीत व्रत को अवश्य करूँगी, किन्तु आप इस कल्याणकारी एवं संतान सुख देने वाले व्रत का विधान, नियम विधि आदि विस्तार से समझाइये। यह सुनकर ऋषि बोले-हे देवकी! यह पुनीत व्रत भादों के महीने की शुक्ल पक्ष की सप्तमी के दिन किया जाता है। उस दिन ब्रह्म मुहूर्त में उठकर किसी नदी अथवा कुएं के पवित्र जल से स्नान करके निर्मल वस्त्र पहिनना चाहिए। फिर श्रीशंकर भगवान तथा जगदम्बा पार्वतीजी की मूर्ति की स्थापना करे। इन प्रतिमाओं के सम्मुख सोने चाँदी के तारों का अथवा रेशम का एक गंडा बनावें। उस गंडे में सात गाँठें लगानी चाहिए। इस गंडे की धूप, दीप, अष्टगंध से पूजा करके अपने हाथ में बांधे और भगवान

शंकर से अपनी कामना सफल होने की शुद्ध भाव से प्रार्थना करे। तदनन्तर सात पूआ बनाकर भगवान को भोग लगावें और सात ही पूआ एवं यथाशक्ति सोने और चाँदी की एक अंगूठी बनाकर इन सबको एक ताँबे के पात्र में रखकर और उनका शोड़षौपचार विधि से पूजन करके किसी सदाचार धर्मनिष्ठ, कर्मनिष्ठ सत्पात्र ब्राह्मण को दान में दे देवें। उसके पश्चात् सात पूआ स्वयं प्रसाद में ग्रहण करे। इस प्रकार इस व्रत का पारायण करना चाहिए। प्रतिमास की शुक्ल पक्ष की सप्तमी के दिन हे देवकी! इस व्रत को इस प्रकार नियमपूर्वक करने से समस्त पाप नष्ट होते हैं और भाग्यशाली संतान उत्पन्न होती है तथा अन्त में शिवलोक की प्राप्ति होती है। हे देवकी! मैंने तुमको सन्तान सप्तमी का व्रत सम्पूर्ण विधान विस्तार सहित वर्णन कर दिया है। उनको अब तुम नियमपूर्वक करो, जिससे तुमको उत्तम संतान प्राप्त होगी।

इनती कथा कहकर भगवान आनन्दकन्द श्री कृष्ण ने धर्मावतार युधिष्ठिर से कहा कि लोमश जी इस प्रकार हमारी माता को शिक्षा देकर चले गये। ऋषि के कथनानुसार हमारी माता देवकी ने इस व्रत को नियमानुसार किया जिसके प्रभाव से हम उत्पन्न हुए।

यह व्रत विशेष रूप से स्त्रियों को तो कल्याणकारी है ही, परन्तु पुरुष को भी समान रूप से कल्याणदायक है। संतान सुख देने वाला, पापों का नाश करने वाला यह उत्तम व्रत है जिसे स्वयं भी करे तथा दूसरों से भी करावें। नियमपूर्वक जो इस व्रत को करता है और भगवान शंकर एवं पार्वती को सच्चे मन से आराधना करता है वह निश्चय ही अमर यश प्राप्त करके अन्त में शिवलोक को प्राप्त होता है।

श्री महालक्ष्मी व्रत कथा

(यह व्रत भाद्रपद के शुक्ल पक्ष की अष्टमी को आरम्भ करके आश्विन मास के कृष्णा पक्ष की अष्टमी को समापन किया जाता है।)

एक समय महर्षि द्वैपायन व्यास जी हस्तिनापुर आये। उनका आगमन सुन समस्त राज्यकुल के कर्मचारी महाराज भीष्म सहित उनका सम्मान आदर कर राजमहल में महाराज को सुवर्ण के सिंहासन पर विराजमान कर अर्घ्य पाद्य आचमन से उनका पूजन किया। व्यास जी के स्वस्थचित्त होने पर राजरानी गांधारी ने महर्षि व्यासजी से हाथ जोड़कर प्रश्न किया कि महाँराज आप त्रिकालज्ञ, तत्वदर्शी हैं, आपसे हमारी प्रार्थना है कि स्त्रियों को कोई ऐसा व्रत व सरल पूजन बताइये जिससे हमारी राज्यलक्ष्मी, सुख, पुत्र, पौत्र, परिवार सदा

सुखी रहे। इतना सुनके व्यास जी ने कहा कि हम ऐसे व्रत पूजन का उल्लेख कर रहे हैं जिससे सदा लक्ष्मी जी स्थिर होकर सुख प्रदान करेंगी। वह श्री महालक्ष्मी व्रत है जिनका पूजन प्रतिवर्ष आश्विन (क्वार) कृष्णपक्ष की अष्टमी का माना जाता है। तब राजरानी गांधारी ने कहा, महात्मन् वह व्रत कैसे आरम्भ होता है, किस विधान से पूजन होता है यह विस्तार से बताने का कष्ट करें। तब महर्षि जी ने कहा कि वह व्रत भाद्रपद शुक्ल पक्ष की अष्टमी के दिन सुबह व्रत का मन में संकल्प कर किसी जलाशय में जाकर स्नान कर स्वच्छ कपड़ा पहने तब ताजी दुर्वा से महालक्ष्मी जी को जल का तर्पण देकर प्रणाम करना चाहिए, फिर घर आकर शुद्ध 16 धागों का एक गण्डा बनाकर प्रतिदिन एक गांठ लगानी चाहिए, इस प्रकार 16 दिन का 16 गांठ का एक गण्डा तैयार कर आश्विन माह की कृष्णापक्ष की अष्टमी को व्रत रख कर, मंडप बनाकर

चंदोवा तानकर उसके नीचे माटी के हाथी पर महालक्ष्मी की मूर्ति स्थापित कर तरह-तरह की पुष्पमालाओं से लक्ष्मी जी व हाथी का पूजन करके कई पकवान सुवासित पदार्थों का नैवेद्य समर्पण करे, और श्रद्धा सहित महालक्ष्मी व्रत करने से आप लोगों की राजलक्ष्मी सदा स्थिर रहेगी, ऐसा विधान बताकर व्यास जी अपने आश्रम को प्रस्थान कर गए।

इधर समयानुसार भाद्रपद मास की शुक्ल पक्ष की अष्टमी से समस्त राजघरानों की नारियों ने व नगर-स्त्रियों ने श्री महालक्ष्मी व्रत का आरम्भ कर दिया, बहुत-सी नारी गांधारी के साथ प्रतिष्ठा मान हेतु व्रत का साथ देने लगीं, कुछ नारी माता कुन्ती के साथ भी व्रत का आरम्भ करने लगीं पर गांधारी जी द्वारा कुछ द्वेष भाव होने लगा, ऐसा होते-होते 15 दिन व्रत के समाप्त होकर सोलहवां दिन आश्विन कृष्ण पक्ष की अष्टमी का आ

गया। उस दिन प्रातःकाल से नगर-नारियों ने उत्सव मनाना आरम्भ कर दिया और समस्त नर-नारी राजमहल में गांधारीजी के यहाँ उपस्थित हो तरह-तरह से महालक्ष्मी जी के मण्डप व माटी के हाथी बनाने-सजाने की बड़ी तैयारियाँ होने लगीं। गाँधारी जी ने नगर की सभी प्रतिष्ठित नारियों को बुलाने को सेवक भेजे, पर माता कुन्ती को नहीं बुलवाया गया और न कोई सूचना भेजी, उत्सव वाद्य की धुन गुंजारने लगीं, जिससे सारे हस्तिनापुर में खुशी की लहर दौड़ गई। माता कुन्ती ने इसे अपना अपमान समझकर बड़ा रंज मनाया और व्रत की कोई तैयारी न की। इतने में महाराजा युधिष्ठिर, अर्जुन, भीमसेन, नकुल सहदेव सहित पाँचों पाण्डव उपस्थित हो गये, तब अपनी माता को गम्भीर देख अर्जुन ने प्रार्थना की, माता! आप इतनी दुखी क्यों हो? क्या हम भी आपके दुख का कारण जान सकते हैं और

दुख दूर करने में भी सहायक हो सकते हैं, आप बतायें। तब माता कुन्ती ने कहा बेटा, जाति अपमान से बढ़कर कोई दुःख नहीं है। आज नगर में श्री महालक्ष्मी व्रत उत्सव में रानी गांधारी ने सारे नगर की सारी औरतें मान देकर बुलाई हैं पर तुमसे ईर्ष्यावश मेरा अपमान कर उत्सव में नहीं बुलाया तो पार्थ ने कहा-माता! क्या वह पूजा का विधान सिर्फ दुर्योधन के ही महल में हो सकता है आप अपने घर नहीं कर सकतीं, तब कुन्ती ने कहा-बेटा कर सकती हूँ पर वह साज सामान इतनी जल्दी तैयार नहीं हो सकता, क्योंकि गाँधारी के 100 पुत्रों ने माटी का विशाल हाथी तैयार करके पूजन का साज सजाया है, वह ऐसा विधान तुमसे न बन सकेगा और उनके उत्सव की तैयारी आज दिन भर से हो रही है। तब पार्थ ने कहा माता, आप पूजन की तैयारी कर नगर में बुलावा फिरावें, मैं ऐसा हाथी पूजन को बुला रहा

हूँ जो आज तक हस्तिनापुर वासियों ने न देखा न पूजन किया होगा। मैं आज ही इन्द्रलोक से इन्द्र का हाथी 'ऐरावत' जो पूजनीय है उसे बुलाकर तुम्हारी पूजा में उपस्थित कर दूंगा, आप अपनी तैयारी करें। इधर माता कुन्ती ने सारे नगर में पूजा का ढिंढोरा पिटवा दिया और पूजा की विशाल तैयारी होने लगी। तब अर्जुन ने सुरपति को ऐरावत भेजने को पत्र लिखा, और एक दिव्य बाण में बाँधकर धनुष पर रखकर देवलोक इन्द्र की सभा में फेंका। इन्द्र ने बाण से निकालकर पत्र खोला और पढ़ा तो आश्चर्य से अर्जुन को लिखा कि हे पांडुकुमार! ऐरावत भेज तो दूंगा पर वह इतनी जल्दी स्वर्ग से कैसे उतर सकता है, तुम इसका उत्तर शीघ्र ही लिखो। पत्र पाकर अर्जुन ने पत्र में बाणों का रास्ता बना के हाथी उतारने की प्रार्थना लिख पत्र वापिस कर दिया। इन्द्र ने मातलि सारथी को आज्ञा दी कि हाथी

को पूर्णरूप से सजाकर हस्तिनापुर में उतारने का प्रबंध करो। महावत ने तरह-तरह के साज-सामान से ऐरावत को सजाया, देवलोक की अम्बर झूल डाली गई, सुवर्ण की पालकी रत्नजड़ित कलशों से बाँधी गई, माथे पर रत्नजड़ित जाली सजाई गई, पैरों में घुंघरूँ सुवर्ण मणियों की बांधी गई जिनकी चकाचौंध पर मानव जाति की आँखें नहीं ठहर सकती थीं। इधर सारे नगर में धूम हुई कि कुन्ती माता के घर सजीव इन्द्र का ऐरावत बाणों के रास्ते पर स्वर्ग से उतर कर पूजा जायेगा। सारे नगर के नर-नारी बालक और वृद्धों की भीड़ ऐरावत को देखने एकत्र होने लगी। गांधारी के राजमहल में भी इस बात की चर्चा की बड़ी चहल पहल मच गई, नगर की नारियाँ पूजन-थाली ले लेकर भागने लगीं और माता कुन्ती के महल में उपस्थित होने लगीं, देखते-देखते सारा महल पूजा करने वाली नारियों

से ठसाठस भर गया, सारे नगरवासी ऐरावत के दर्शनों को गली, सड़क, महल अटारियों पर एकत्र हो गये। माता कुन्ती ने ऐरावत को खड़ा करने हेतु रङ्ग बिरङ्गे चौक को पुरवाकर नवीन रेशमी वस्त्र बिछवा दिया। हस्तिनापुरवासी तरह-तरह की स्वागत तैयारी में फूल माला अबीर केशर हाथों में लेकर पंक्तिबद्ध खड़े थे, इधर इन्द्र की आज्ञा पाकर ऐरावत स्वर्ग से बाणों के बनाए रास्ते से धीरे-धीरे आकाश मार्ग से उतरने लगा, जिसके आभूषणों की आवाज नगर-वासियों को आने लगी। ऐरावत के दर्शन होते ही नर नारियों ने जय जयकार के नारे लगाना आरम्भ किया। ठीक सायंकाल ऐरावत माता कुन्ती के महल के चौक में उतर आया तब समस्त नर-नारियों ने पुष्प-माला, अबीर केशर को चढ़ाकर स्वागत किया।

महाराज धौम्य पुरोहित द्वारा ऐरावत पर महालक्ष्मी जी की मूर्ति स्थापित

कराके वेद मन्त्रों द्वारा पूजन की कई। नगर वासियों ने भी लक्ष्मी पूजा का स्वागत करके ऐरावत की पूजा की। फिर तरह-तरह के मेवा पकवान लेकर ऐरावत को खिलाये गये, ऊपर से जमुना जल पिलाया गया, फिर तरह-तरह के पुष्पों की ऐरावत पर वर्षा की गई। पुरोहित द्वारा 'स्वस्ति पुण्याह वाचन' कर व्रती नारियों द्वारा लक्ष्मी जी का पूजन विधान से कराया गया। कुन्ती ने व्रत के डोरे के गण्डा में सोलहवीं गाँठ लगाकर लक्ष्मी के सामने समर्पण किया। ब्राह्मणों को पकवान मेवा मिठाई देकर भोजन की व्यवस्था की गई, तब वस्त्र, द्रव्य, सुवर्ण अन्न आभूषण देकर के ब्राह्मणों को संतुष्ट किया, तत्पश्चात् सभी व्रती नर नारियों ने श्री महालक्ष्मी जी की दीपक जला कर प्रेम से सम्पूर्ण पूजन कर आरती आरम्भ की।

महालक्ष्मी जी की आरती

ॐ जै लक्ष्मी माता, जै लक्ष्मी माता। तुमको निशदिन सेवत हर विष्णु विधाता । जय

ब्रह्माणी रुद्राणी कमला तू ही है जग माता। सूर्य चन्द्रमा ध्यावत नारद ऋषि गाता । जय

दुर्गा रूप निरञ्जन सुख सम्पति दाता। जो कोई तुमको ध्यावे ऋद्धिसिद्धि धन पाता । जय

तू ही है पाताल बसन्ती तू ही है शुभ दाता। कर्म प्रभाव प्रकाशक जग निधि से त्राता । जय

जिस घर थारो वासो वाहि में गुण आता। कर न सके सोई करले मन नहीं धड़काता । जय

तुम बिन यज्ञ न होवे वस्त्र न कोई पाता। खान पान का वैभव तुम बिन नस जाता । जय

शुभ गुण सुन्दर मुक्ता क्षीर निधि जाता। रत्न चतुर्दश तोकूँ कोई नहीं पाता । जय

यह आरती लक्ष्मीजी की जो कोई नर गाता। उर आनंद अति उपजे पाप उतर जाता । जय

आरती गणपति जी की

गणपति की सेवा मंगल मेवा सेवा से सब विघ्न टरें।

तीन लोक तैंतीस देवता द्वार खड़े सब अर्ज करे। ऋद्धि-सिद्धि दक्षिण वाम विराजे आनन्द सौं चंवर ढुरें॥

धूप दीप और लिए आरती भक्त खड़े जयकार करें। गुड़ के मोदक भोग लगत है मूषक वाहन चढ़े सरें॥

सौम्य सेवा गणपति की विघ्न भागजा दूर परें। भादों मास शुक्ल चतुर्थी दोपारा भर पूर परें॥

लियो जन्म गणपति प्रभु ने दुर्गा मन आनन्द भरें। श्री शंकर के आनन्द उपज्यो, नाम सुमरयां सब विघ्न टरें॥

आन विधाता बैठे आसन इन्द्र अप्सरा नृत्य करें। देखि वेद ब्रह्माजी जाको विघ्न विनाशन रूप अनूप करें॥

पग खम्बा सा उदर पुष्ट है चन्द्रमा हास्य करें। दे श्राप चन्द्रदेव को कलाहीन तत्काल करें॥

चौदह लोक में फिरें गणपति तीन लोक में राज करें। उठ प्रभात जो आरती गावे ताके सिर यश छत्र फिरें॥

गणपति जी की पूजा पहले करनी काम सभी निर्विघ्न करें। श्री गणपति जी की हाथ जोड़कर स्तुति करें॥

लेजर टाईप सेटिंग

कुमार प्रिंटो फास्ट, 260, कूँचा मीर आशिक, चावड़ी बाजार, दिल्ली-110006 दूरभाष : 3261942